पार्श्वनाथ विद्याश्रम ग्रंथ माला
: २५ :

जैन प्रतिमाविज्ञान

लेखक :
डा० मारुतिनन्दन प्रसाद तिवारी

पार्श्वनाथ विद्याश्रम शोध-संस्थान
वाराणसी - २२१००५
१९८१

गोमुख (८) की भी मूर्तियां हैं। गोमुख आकृतियों की भुजाओं में पद्म और घट हैं। प्रवेश-द्वार पर १६ मांगलिक स्वप्न और गंगा-यमुना की मूर्तियां भी अंकित हैं। छतों और स्तम्भों पर जिनों एवं जैनाचार्यों की लघु मूर्तियां हैं।

आदिनाथ मन्दिर—योजना, निर्माण शैली एवं मूर्तिकला की दृष्टि से आदिनाथ मन्दिर खजुराहो के वामन मन्दिर (ल० १०५०-७५ ई०) के निकट है। कृष्णदेव ने इसी आधार पर मन्दिर को ग्यारहवीं शती ई० के उत्तरार्ध में निर्मित माना है।[1] गर्भगृह में ११५८ ई० की काले प्रस्तर की एक आदिनाथ मूर्ति है। ललाट-बिम्ब पर चक्रेश्वरी आमूर्तित है। मन्दिर के मण्डोवर पर मूर्तियों की तीन समानान्तर पंक्तियां हैं। ऊपर की पंक्ति में गन्धर्व, किन्नर एवं विद्याधर मूर्तियां हैं। मध्य की पंक्ति में चार कोनों पर त्रिभंग में आठ चतुर्भुज गोमुख आकृतियां उत्कीर्ण हैं। आठ गोमुख आकृतियां सम्भवतः अष्ट-वासुकियों का चित्रण है।[2] इनके करों में वरदमुद्रा, चक्राकार सनाल पद्म (या परशु), चक्राकार सनाल पद्म एवं जलपात्र हैं। निचली पंक्ति में अष्ट-दिक्पालों की चतुर्भुज मूर्तियां हैं। दक्षिणी अधिष्ठान पर ललितमुद्रा में आसीन चतुर्भुज क्षेत्रपाल की मूर्ति है। क्षेत्रपाल का वाहन श्वान् है और करों में गदा, नकुलक, सर्प एवं फल प्रदर्शित हैं। सिंहवाहना अम्बिका की तीन और गरुडवाहना चक्रेश्वरी की दो मूर्तियां हैं।

आदिनाथ मन्दिर के मण्डोवर की १६ रथिकाओं में १६ देवियों की मूर्तियां उत्कीर्ण हैं। ये मूर्तियां मूर्ति-वैज्ञानिक दृष्टि से विशेष महत्व की हैं। भिन्न आयुधों एवं वाहनों वाली स्वतन्त्र देवियों की सम्भावित पहचान १६ महाविद्याओं से की जा सकती है।[3] ललितमुद्रा में आसीन या त्रिभंग में खड़ी देवियां चार से आठ भुजाओं वाली हैं। उत्तर और दक्षिण की भित्तियों पर ७-७ और पश्चिम की भित्ति पर दो देवियां उत्कीर्ण हैं।[4] सभी उदाहरणों में रथिका-बिम्ब काफी विरूप हैं, जिसकी वजह से उनकी पहचान कठिन हो गई है। केवल कुछ ही देवियों के निरूपण में पश्चिम भारत के लाक्षणिक ग्रन्थों के निर्देशों का आंशिक अनुकरण किया गया है। सभी देवियां वाहन से युक्त हैं और उनके शीर्ष भाग में लघु जिन आकृतियां उत्कीर्ण हैं। देवियों के स्कन्धों के ऊपर सामान्यतः अभयमुद्रा, पद्म, पद्म एवं जलपात्र से युक्त देवियों की दो छोटी मूर्तियां उत्कीर्ण हैं। दिगंबर ग्रन्थों से तुलनात्मक अध्ययन के आधार पर कुछ देवियों की सम्भावित पहचान के प्रयास किये गये हैं। वाहनों या कुछ विशिष्ट आयुधों या फिर दोनों के आधार पर जांबूनदा, गौरी, काली, महाकाली, गांधारी, अच्छुप्ता एवं वैरोट्या महाविद्याओं की पहचान की गई है।

मन्दिर के प्रवेश-द्वार पर वाहन से युक्त चतुर्भुज देवियां निरूपित हैं। इनमें केवल लक्ष्मी, चक्रेश्वरी, अम्बिका एवं पद्मावती की ही निश्चित पहचान सम्भव है।[5] दहलीज पर दो चतुर्भुज पुरुष आकृतियां ललितमुद्रा में उत्कीर्ण हैं। इनकी तीन अवशिष्ट भुजाओं में अभयमुद्रा, परशु एवं चक्राकार पद्म हैं। देवता की पहचान सम्भव नहीं है। दहलीज के बायें छोर पर महालक्ष्मी की मूर्ति है। दाहिने छोर पर त्रिसर्पफणा और पद्मासना देवी की मूर्ति है। देवी की पहचान सम्भव नहीं है। प्रवेश-द्वार पर मकरवाहिनी गंगा एवं कूर्मवाहिनी यमुना और १६ मांगलिक स्वप्न उत्कीर्ण हैं।

शान्तिनाथ मन्दिर—शान्तिनाथ मन्दिर (मन्दिर १) में शान्ति की एक विशाल कायोत्सर्ग प्रतिमा है। कनिंघम ने इस मूर्ति पर १०२८ ई० का लेख देखा था, जो सम्प्रति प्लास्टर के अन्दर छिप गया है।[6]

---

१ **वही**, पृ० ५८

२ खजुराहो के चतुर्भुज एवं दूलादेव हिन्दू मन्दिरों पर भी समान विवरणों वाली आठ गोमुख आकृतियां उत्कीर्ण हैं। इनकी भुजाओं में वरदमुद्रा (या वरदाक्ष), त्रिशूल (या स्रुक), पुस्तक-पद्म एवं जलपात्र प्रदर्शित हैं।

३ मध्य भारत में १६ महाविद्याओं के सामूहिक चित्रण का यह एकमात्र सम्भावित उदाहरण है।

४ उत्तरी भित्ति की दो रथिकाओं के बिम्ब सम्प्रति गायब हैं।

५ तिवारी, एम० एन० पी०, 'खजुराहो के आदिनाथ मन्दिर के प्रवेश-द्वार की मूर्तियां', **अनेकान्त**, वर्ष २४, अं० ५, पृ० २१८–२१

६ कनिंघम, ए०, **आ०स०इं०रि०**, १८६४–६५, खं० २, पृ० ४३४

प्राचीन जैन मन्दिरों के अतिरिक्त स्थानीय संग्रहालयों[1] एवं नवीन जैन मन्दिरों में भी जैन मूर्तियां सुरक्षित हैं। उनका भी संक्षेप में उल्लेख अपेक्षित है। खजुराहो की प्राचीनतम जिन मूर्तियां पार्श्वनाथ मन्दिर की हैं। खजुराहो से दसवीं से बारहवीं शतीई० के मध्य की लगभग २५०जिन मूर्तियां मिली हैं (चित्र४२)।[2] ये मूर्तियां श्रीवत्स एवं लांछनों से युक्त हैं। यहां जिनों की ध्यानस्थ मूर्तियां अपेक्षाकृत अधिक हैं। सुपार्श्व एवं पार्श्व अधिकांशतः कायोत्सर्ग में निरूपित हैं। अष्ट-प्रातिहार्यों एवं यक्ष-यक्षी युगलों से युक्त[3] जिन मूर्तियों के परिकर में नवग्रहों एवं जिनों की छोटी मूर्तियां भी उत्कीर्ण हैं। सभी जिनों के साथ स्वतन्त्र यक्ष-यक्षी नहीं निरूपित हैं। केवल ऋषभ (गोमुख-चक्रेश्वरी), नेमि (सर्वानुभूति-अम्बिका), पार्श्व (धरणेन्द्र-पद्मावती) एवं महावीर (मातंग-सिद्धायिका) के साथ ही पारम्परिक या स्वतन्त्र लक्षणों वाले यक्ष-यक्षी निरूपित हैं। अन्य जिनों के साथ वैयक्तिक विशिष्टताओं से रहित सामान्य लक्षणों वाले यक्ष-यक्षी आमूर्तित हैं। खजुराहो में केवल ऋषभ (६०), अजित, सम्भव, अभिनन्दन, सुमति, पद्मप्रभ, सुपार्श्व, चन्द्रप्रभ, शान्ति, मुनिसुव्रत, नेमि, पार्श्व (११) एवं महावीर (९) की ही मूर्तियां हैं। यहां द्वितीर्थी (९), त्रितीर्थी (१, मन्दिर ८) और चौमुखी (१, पुरातात्विक संग्रहालय, खजुराहो १५८८) जिन मूर्तियां भी हैं (चित्र ६१, ६३)। मन्दिर १८ के उत्तरंग पर किसी जिन के दीक्षा-कल्याणक का दृश्य है। जैन युगलों (७) एवं आचार्यों की भी कई मूर्तियां हैं। जैन युगलों के शीर्ष भाग में वृक्ष एवं लघु जिन मूर्ति उत्कीर्ण हैं। स्त्री की बायीं भुजा में सदैव एक बालक प्रदर्शित है।

अम्बिका (११) एवं चक्रेश्वरी (१३) खजुराहो की सर्वाधिक लोकप्रिय यक्षियां हैं (चित्र५७)। पार्श्वनाथ मन्दिर की दक्षिणी जंघा की एक द्विभुज मूर्ति के अतिरिक्त अम्बिका सदैव चतुर्भुज है। चक्रेश्वरी चार से दस भुजाओं वाली है। पद्मावती की भी तीन मूर्तियां हैं। मन्दिर २४ के उत्तरंग पर सिद्धायिका की भी एक मूर्ति है। अश्ववाहना मनोवेगा की एक मूर्ति पुरातात्विक संग्रहालय, खजुराहो (९४०) में है। यक्षों में केवल कुबेर की ही स्वतन्त्र मूर्तियां (४) मिली हैं।

अन्य स्थल

जबलपुर-भेंड़ाघाट मार्ग के समीप त्रिपुरी के अवशेष हैं जिसमें चक्रेश्वरी, पद्मावती, ऋषभ एवं नेमि की मूर्तियां हैं।[4] बिल्हारी (जबलपुर) में ल० दसवीं शती ई० का जैन मन्दिर एवं मूर्ति अवशेष हैं। मन्दिर के प्रवेश-द्वार पर पार्श्व और बाहुबली की मूर्तियां हैं। यहां से चक्रेश्वरी एवं बाहुबली की भी मूर्तियां मिली हैं। जबलपुर से अर की एक मूर्ति मिली है। शहडोल से ऋषभ, पार्श्व, पद्मावती, जैन युगल एवं जिन चौमुखी मूर्तियां (११वीं शती ई०) प्राप्त हुई हैं (चित्र५५)। ऊन (इन्दौर) और अहाड़ (टीकमगढ़) से ग्यारहवीं-बारहवीं शती ई० की जैन मूर्तियां मिली हैं (चित्र ६७)।[5] अहाड़ से शान्ति (११८० ई०), कुंथु, अर एवं महावीर की मूर्तियां उपलब्ध हुई हैं। अहाड़ से कुछ दूर बानपुर एवं जतरा से भी जैन मूर्तियां (१२ वीं–१३ वीं शती ई०) मिली हैं। टीकमगढ़ स्थित नवागढ़ से बारहवीं शती ई० के जैन मन्दिर एवं मूर्ति अवशेष मिले हैं। यहां से अर (११४५ ई०) और पार्श्व की मूर्तियां मिली हैं।[6] विदिशा के बडोह एवं पठारी से दसवी-ग्यारहवीं शती ई० के जैन मन्दिर एवं मूर्तियां प्राप्त हुई हैं। पठारी से अम्बिका एवं महावीर की मूर्तियां मिली हैं। रीवां एवं गुर्गी से जिनों एवं जैन युगलों की मूर्तियां (११ वीं शती ई०) मिली हैं। देवास और गंधावल से प्राप्त जैन मूर्तियों (११ वीं–१२ वीं शती ई०) में पार्श्व एवं विंशतिभुज चक्रेश्वरी की मूर्तियां उल्लेखनीय हैं।[7]

---

१ जैन मूर्तियां आदिनाथ मन्दिर के पीछे (शान्तिनाथ संग्रहालय), पुरातात्विक संग्रहालय एवं जार्डिन संग्रहालय में सुरक्षित हैं।

२ इस संख्या में उत्तरंगों, प्रवेश-द्वारों एवं मन्दिरों के अन्य भागों की लघु जिन आकृतियां नहीं सम्मिलित हैं।

३ कुछ उदाहरणों में ऋषभ, अजित, सुपार्श्व, पार्श्व, मुनिसुव्रत एवं महावीर के साथ यक्ष-यक्षी नहीं निरूपित हैं।

४ शास्त्री, अजयमित्र, 'त्रिपुरी का जैन पुरातत्व', **जैन मिलन**, वर्ष १२, अं० २, पृ० ६९–७२

५ **स्ट०जै०आ०**, पृ० २३; जैन, नीरज, 'अतिशय क्षेत्र अहार', **अनेकान्त**, वर्ष १८, अं० ४, पृ० १७७–७९

६ जैन, नीरज, 'नवागढ़ : एक महत्वपूर्ण मध्ययुगीन जैन तीर्थ', **अनेकान्त**, वर्ष १५, अं० ६, पृ० २७७–७८

७ गुप्ता, एस०पी० तथा शर्मा, बी०एन०, 'गन्धावल और जैन मूर्तियां', **अनेकान्त**, खं० १९, अं० १-२, पृ०१२९-३०

(१८) अरनाथ

जीवनवृत्त

अरनाथ इस अवसर्पिणी के अठारहवें जिन हैं। हस्तिनापुर के शासक सुदर्शन उनके पिता और महादेवी (या मित्रा) उनकी माता थीं। गर्भकाल में माता ने रत्नमय चक्र के अर को देखा था, इसी कारण बालक का नाम अरनाथ रखा गया। चक्रवर्ती शासक के रूप में काफी समय तक राज्य करने के पश्चात् अर ने दीक्षा ली और तीन वर्षों की तपस्या के बाद गजपुरम् के सहस्राम्रवन में आम्र वृक्ष के नीचे कैवल्य प्राप्त किया। सम्मेद शिखर इनकी भी निर्वाण-स्थली है।[1]

मूर्तियां

श्वेतांबर परम्परा में अर का लांछन नन्द्यावर्त है, और दिगंबर परम्परा में मत्स्य। उनके यक्ष-यक्षी यक्षेन्द्र (या यक्षेश या खेन्द्र) और धारिणी (या काली) हैं। दिगंबर परम्परा में यक्षी तारावती (या विजया) है। शिल्प में अर के पारम्परिक यक्ष-यक्षी का निरूपण नहीं हुआ है। अर की मूर्तियों में सामान्य लक्षणों वाले यक्ष-यक्षी के चित्रण दसवीं शती ई० में प्रारम्भ हुए।

पुरातत्व संग्रहालय, मथुरा में सुरक्षित (१३८८) और मथुरा से ही प्राप्त एक गुप्तकालीन जिन मूर्ति की पहचान डा० अग्रवाल ने अर से की है। सिंहासन पर उत्कीर्ण मीन-मिथुन को उन्होंने मत्स्य लांछन का अंकन माना है।[2] पर हमारी दृष्टि में यह पहचान ठीक नहीं है क्योंकि मीन-मिथुन के खुले मुखों से मुक्तावली प्रसारित हो रही है जो सिंहासन का सामान्य अलंकरण प्रतीत होता है। सहेठ-महेठ (गोंडा) की दसवीं शती ई० की एक मूर्ति राज्य संग्रहालय, लखनऊ (जे ८६१) में है। इसकी पीठिका पर मत्स्य लांछन और यक्ष-यक्षी निरूपित हैं। मत्स्य-लांछन-युक्त दो मूर्तियां बारभुजी एवं त्रिशूल गुफाओं में भी हैं।[3] बारभुजी गुफा की मूर्ति में यक्षी भी आमूर्तित है। नवागढ़ (टीकमगढ़) से ११४५ ई० की एक विशाल खड्गासन मूर्ति मिली है।[4] मूर्ति की पीठिका पर मत्स्य लांछन और यक्ष-यक्षी चित्रित हैं। १०५३ ई० की एक कायोत्सर्ग मूर्ति मदनपुर पहाड़ी के मन्दिर १ में है।[5] बारहवीं शती ई० की तीन खड्गासन मूर्तियां क्रमशः अहाड़ (११८० ई०), मदनपुर (मन्दिर २, ११४७ ई०) एवं बजरंगगढ़ (११७९ ई०) से मिली हैं।[6] सभी उदाहरणों में अर निर्वस्त्र हैं।

(१९) मल्लिनाथ

जीवनवृत्त

मल्लिनाथ इस अवसर्पिणी के उन्नीसवें जिन हैं। मिथिला के शासक कुम्भ उनके पिता और प्रभावती उनकी माता थीं। श्वेतांबर परम्परा के अनुसार मल्लि नारी तीर्थंकर हैं। पर दिगंबर परम्परा में मल्लि को पुरुष तीर्थंकर ही बताया गया है। दिगंबर परम्परा में नारी को मुक्ति या निर्वाण की अधिकारिणी ही नहीं माना गया है। इसलिए नारी के तीर्थंकर-पद प्राप्त करने का प्रश्न ही नहीं उठता। इनकी माता को गर्भकाल में पुष्प शय्या पर सोने का दोहद उत्पन्न हुआ था, इसी कारण बालिका का नाम मल्लि रखा गया। श्वेतांबर परम्परा के अनुसार मल्लि अविवाहिता थीं और दीक्षा के दिन ही उन्हें अशोकवृक्ष के नीचे कैवल्य प्राप्त हो गया। इनकी निर्वाण-स्थली सम्मेद शिखर है।[7]

---

१ हस्तीमल, **पू०नि०**, पृ० १२२–२४

२ अग्रवाल, वी०एस०, 'केटलाग आव दि मथुरा म्यूज़ियम', **ज०यू०पी०हि०सो०**, खं० २३, भाग १–२, पृ० ५७

३ मित्रा, देबला, **पू०नि०**, पृ० १३२; कुरेशी, मुहम्मद हमीद, **पू०नि०**, पृ० २८२

४ जैन, नीरज, 'नवागढ़ : एक महत्वपूर्ण मध्यकालीन जैनतीर्थ', **अनेकान्त**, वर्ष १५, अं० ६, पृ० २७७

५ कोठिया, दरबारी लाल, 'हमारा प्राचीन विस्मृत वैभव', **अनेकान्त**, वर्ष १४, अगस्त १९५६, पृ० ३१

६ जैन, नीरज, 'बजरंगगढ़ का विशद जिनालय', **अनेकान्त**, वर्ष १८, अं० २, पृ० ६५–६६

७ हस्तीमल, **पू०नि०**, पृ० १२५–३३

(३) 'आइकानोग्राफी ऑव दि सिक्स्टीन्थ तीर्थंकर', **वा०अंहि०**, खं०९, अं०९, सितम्बर १९५९, पृ०२७८-७९

(४) **दि जैन सोर्सेज ऑव दि हिस्ट्री ऑव ऐन्शण्ट इण्डिया** (१०० बी० सी०-ए० डी० ९००), दिल्ली, १९६४

(५) 'जेनिसिस ऑव जैन लिट्रेचर ऐण्ड दि सरस्वती मूवमेण्ट', **सं०पु०प०**, अं० ९, जून १९७२, पृ० ३०-३३

जैन, नीरज,

(१) 'नवागढ़ : एक महत्वपूर्ण मध्ययुगीन जैन तीर्थ', **अनेकान्त**, वर्ष १५, अं० ६, फरवरी १९६३, पृ० २७७–७८

(२) 'पतियानदाई मन्दिर की मूर्ति और चौबीस जिन शासनदेवियां', **अनेकान्त**, वर्ष १६, अं० ३, अगस्त १९६३, पृ० ९९–१०३

(३) 'ग्वालियर के पुरातत्व संग्रहालय की जैन मूर्तियां', **अनेकान्त**, वर्ष १५, अं० ५, दिसम्बर १९६३, पृ० २१४–१६

(४) 'तुलसी संग्रहालय, रामवन का जैन पुरातत्व', **अनेकान्त**, वर्ष १६, अं० ६, फरवरी १९६४, पृ० २७९–८०

(५) 'बजरंगगढ़ का विशद जिनालय', **अनेकान्त**, वर्ष १८, अं० २, जून १९६५, पृ० ६५–६६

(६) 'अतिशय क्षेत्र अहार', **अनेकान्त**, वर्ष १८, अं० ४, अक्तूबर १९६५, पृ० १७७–७९

(७) 'अहार का शान्तिनाथ संग्रहालय', **अनेकान्त**, वर्ष १८, अं० ५, दिसम्बर १९६५, पृ० २२१–२२

जैन, बनारसीदास,

'जैनिजम इन दि पंजाब', **सरूप भारती : डॉ० लक्ष्मण सरूप स्मृति अंक** (सं जगन्नाथ अग्रवाल तथा भीमदेव शास्त्री), विश्वेश्वरानन्द इण्डोलाजिकल सिरीज ६, होशियारपुर, १९५४, पृ० २३८–४७

जैन, बालचंद्र,

(१) 'महाकौशल का जैन पुरातत्व', **अनेकान्त**, वर्ष १७, अं० ३, अगस्त १९६४, पृ० १३१–३३

(२) 'जैन प्रतिमालक्षण', **अनेकान्त**, वर्ष १९, अं० ३, अगस्त १९६६, पृ० २०४–१३

(३) 'धुबेला संग्रहालय के जैन मूर्ति लेख', **अनेकान्त**, वर्ष १९, अं० ४, अक्तूबर १९६६, पृ० २४४–४५

(४) 'जैन ब्रोन्जेज फ्राम राजनपुर खिनखिनी', **ज०इं०म्यू०**, खं० ११, १९५५, पृ० १५–२०

(५) **जैन प्रतिमाविज्ञान**, जबलपुर, १९७४

जैन, भागचन्द्र,

देवगढ़ की जैन कला, नयी दिल्ली, १९७४

जैन, शशिकान्त,

'सम कामन एलिमेण्ट्स इन दि जैन ऐण्ड हिन्दू पैन्थिआन्स-I-यक्षज ऐण्ड यक्षिणीज', **जैन एण्टि०**, खं० १८, अं० २, दिसम्बर १९५२, पृ० ३२–३५; खं० १९, अं० १, जून १९५३, पृ० २१–२३

जैन, हीरालाल,

(१) **जै०शि०सं०** (सं०), भाग १, माणिकचन्द्र दिगंबर जैन ग्रन्थमाला २८, बम्बई, १९२८

(२) 'जैनिजम', **दि स्ट्रगल फार एम्पायर** (सं० आर० सी० मजूमदार तथा ए० डी० पुसाल्कर), बम्बई, १९६० (पु० मु०), पृ० ४२७–३५

(३) **भारतीय संस्कृति में जैन धर्म का योगदान**, भोपाल, १९६२